हरियाणा में महिलाओं की स्थिति 1900 ई. से 1966 ई. तक

Dr. Sulochana Devi
Lect. (P.G.T.) History
M.D.A. Kanya Gurukul
Anjathali (Karnal)

सारांश

प्रस्तुत शोध पत्र में स्वतन्त्रता प्राप्ति से पहले पंजाब राज्य का एक हिस्सा (दक्षिण–पूर्वी पंजाब) रहते हुए वर्तमान हरियाणा क्षेत्र की स्त्रियों के सामाजिक स्तर में आए परिवर्तन का उल्लेख किया गया है। कानून रूप से समानता प्राप्ति के बावजूद भी स्त्रियों के सामाजिक स्तर में उस तेजी से परिवर्ततन नहीं आया जिस तेजी से आना चाहिए था। सरकार द्वारा महिलाओं की शिक्षा की तरफ ध्यान देने के बावजूद भी महिला शिक्षा क्षेत्र में अपेक्षित सुधार नहीं हो सका। महिलाओं को केवल गृहकार्य तक ही सीमित माना गया तथा हरियाणा में अनेक सामाजिक कुरितियाँ जैसे– बाल–विवाह, कन्या वध, पर्दा प्रथा, बहुपति विवाह आदि प्रचलित थी।

महिलाओं को समाज में पुरुषों पर निर्भर रहना पड़ता था। महिलाओं की स्थिति सुधारने के लिए अनेक प्रयास किए गए लेकिन उनकी स्थिति में पर्याप्त सुधार न हो सका। इनके साथ ही शिक्षा महंगी व अनुपयोगी समझी जाती थी तथा रूढ़िवादी व्यक्ति तो शिक्षा की अपेक्षा भाग्य पर अधिक भरोसा करते थे।

इस शोध पत्र का उद्देश्य हरियाणा के अलग प्रांत के रूप में गठन से पूर्व यहाँ महिलाओं की स्थिति को दर्शाना है।

प्रस्तावना–

20वीं शताब्दी को इतिहास में एक परिवर्तन का काल एवं पुर्नजागरण काल माना जाता है तथा इस काल में अनेक सामाजिक, धार्मिक व राजनितिक परिवर्तन हुए। वास्तव में यह शताब्दी भारत में एक परिवर्तन का समय था। इस समय अनेक सामाजिक–धार्मिक सुधार आन्दोलन अपने चरम पर थे। उत्तर भारत में तो इस काल को परिवर्तन का काल भी कहा

जाता है। समाज में फैली रूढ़ीवादी परम्परा व प्राचीन परम्परा को बदलने का प्रयास किया गया।

20वीं सदी के मोड़ पर दो महान आपदाएं प्रथम विश्व–युद्ध व द्वितीय–युद्ध को देखा गया। इन महान युद्धों के बीच में ''20वीं सदी'' ने महान समृद्धि को भी देखा। जब नई तकनीकी की प्रगति ने विश्व को अपने आघोष में ले लिया, लेकिन जल्द ही इसका अंत एक महान निराशा में हुआ। द्वितीय विश्व युद्ध के बाद शांति की स्थापना हुई।

पंजाब का हिस्सा होने के कारण वर्तमान हरियाणा में बदलाव की प्रक्रिया धीमी रही तथा यह क्षेत्र काफी पिछड़ा हुआ था। उस समय या अकाल व सूखा पड़ने के कारण अनेक महामारियों ने जन्म ले रखा था। हरियाणा में सन् 1803, सन् 1812–1, सन् 1817–18, 1833–34 व 1851–52 में भयंकर अकाल पड़े। सरकार ने अकाल से पीड़ित लोगों की रक्षा के लिए कोई ठोस कदम नहीं उठाया। कई महामारियों के कारण भी जैसे कातक वाली 'प्लेग' आदि से हजारों लोग कालग्रास बन जाते थे किन्तु सरकार ने उनकी कोई भी संतोषजनक सहायता नहीं की थी।[1] सामाजिक वर्ग अनेक जातियों में बंटा हुआ था, जिसके कारण शिक्षा का स्तर ठीक नहीं था। 20वीं सदी के प्रारम्भ में हरियाणा की महिलाएं काफी हद तक मध्यकालीन परिस्थितियों में जीवन यापन कर रही थी वे सामाजिक, आर्थिक व शैक्षिक तौर से काफी पिछड़ी हुई थी। उनकी दयनीय दशा सुधारने के पक्ष में, कुछ सामाजिक धार्मिक सुधार आन्दोलन के प्रयास आरम्भ हुए।

कार्य–

समाज में स्त्रियां परम्परागत जीवन जी रही थी। पुरुषों की तुलना में कठोर परिश्रम – जैसे ईंधन के लिए लकड़ी व उपले आदि लाना, बनाना, पानी भरना, भोजन पकाकर खेतों में ले जाना, फसलों की रखवाली करना तथा शेष समय चर्खे में सूत कातना उनके ही कार्य थे। इस क्षेत्र में पशुपालन भी जीवन का एक आवश्यक अंग था। अतः पशुओं की देखभाल व गृहकार्य कार्य महिलाओं के ही कार्य थे। यहां पर विवाह के लिए भी कृषि कार्यों को ध्यान में रखकर लड़की का चुनाव किया जाता था।

शिक्षा–

20वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध तक स्त्रियों की निर्योग्यताओं के आधार पर इस काल में स्त्रियों को शिक्षा प्राप्त करने, स्वतंत्र रूप से अपने अधिकारों की मांग करने और व्यवहार नियमों में किसी प्रकार का भी परिवर्तन करने का अधिकार नहीं था। स्त्रियों में अज्ञानता इस स्तर तक बढ़ चुकी थी कि स्वतंत्रता के पहले तक स्त्रियों में साक्षरता का प्रतिशत 6 से भी कम था। यदि स्त्रियां शिक्षित होती, तब न तो उन्होंने पक्षपातपूर्ण धार्मिक विधानों को स्वीकार किया होता और न ही वे अपने अधिकारों से वंचित हो पाती। वैसे भी शिक्षा के मामले में रूचि को दो भागों में बांटा जा सकता एवं धनाड्य वर्ग या सामाजिक से सम्पन्न पोषण की स्त्री तथा दूसरी साधारण परिवार की स्त्री। हरियाणा में शिक्षा के अभाव में स्त्रियों का जीवन अपने परिवार तक ही सीमित हो गया। उनकी एकमात्र शिक्षा पिता और पति द्वारा स्त्री को अपना स्वतंत्र अस्तित्व भूल जाने के लिए बाध्य किया गया और पति तथा पुत्र की सेवा करना ही उसका एकमात्र धर्म निर्धारित किया गया। पुरुषों के अधिकार निरन्तर बढ़ते गए और स्त्रियों की स्थिति निम्नतम हो गयी। उस समय स्त्रियों द्वारा सतियों एवं पतिधर्म की कथाएं पढ़ना ही नैतिकता की कसौटी मानी जाती थी। अशिक्षा के कारण स्त्रियां अपनी इस स्थिति को ही समाज का धर्म समझने लगी और वास्वविक रूप से कभी समझा ही नहीं जा सका।[3]

20वीं सदी के प्रारम्भ में स्त्री शिक्षा हरियाणा में बहुत कम थी। हरियाणा में केवल 0.07 प्रतिशत स्त्रियां साक्षर थी।[4] लड़कियों की शिक्षा अकाल तथा भयंकर महामारी से प्रभावित हुई तथा विद्यालयों की संख्या काफी कम थी।[5] 1910 ई. में कुल स्त्री जनसंख्या का 0.33 प्रतिशत विद्यालय जाती थी। 1913 ई. में सरकार की तरफ से शिक्षा नीति में सिफारिश की गई कि महिला शिक्षा में प्रत्येक स्तर पर प्रगति करने की ओर ध्यान किया जाए। 1919 ई. में पंजाब प्राइमरी शिक्षा की सिफारिश की गई। इन प्रयासों के फलस्वरूप 1921 ई. तक लड़कियों की शिक्षा के क्षेत्र में मामूली सुधार हुआ। उदाहरण के तौर पर रोहतक जिला में लड़कियों के लिए 49 प्राथमिक एवं 1 उच्च विद्यालय खोला गया था 1920 में अम्बाला जिला में लड़कियों के लिए विद्यालय स्थानीय संस्था द्वारा खोले गए।[6] इन सब के बावजूद विद्यालय जाने वाली लड़कियों के प्रतिशत में कोई संतोषजनक प्रगति नहीं हुई। अंग्रेजी सरकार ने हरियाणा में

स्कूल खोले तो ऐसे ही एक स्कूल जिला करनाल के कस्बा घरौंडा के गांव 'अराईपुरा' में 1923 में खोला गया था।[7] 1947 में हरियाणा में 6 महाविद्यालय थे जिनमें से एक भी महिला महाविद्यालय नहीं था। सन् 1947 तक महिला साक्षरता दर सन् 1921 की 0.8 की प्रतिशत की तुलना में 7.14 प्रतिशत हो गई थी।[8]

मायके में उसे बिल्कुल सादा जीवन व्यतीत करने को कहा जाता था। एक कहावत भी प्रचलित थी[9] –

बाप के घर बेटी रहे गूदड़ लपेटी।[10]

इस कहावत का अर्थ है कि उस समय में लड़कियों को पिता के घर में दबाव में रखा जाता व उनको किसी भी प्रकार की खाने–पहनने की आजादी नहीं थी। उनको पिता के घर में किसी भी प्रकार का फैशन करने की अनुमति नहीं थी व पहनने के लिए वस्त्र भी फटे–पुराने ही दिए जाते थे। उन्हें फैशन के हर दौर से दूर रखा जाता था व लड़कियों के बनने–संवरने को अच्छी नजर से नहीं देखा जाता था।

पहनावा–

हरियाणा क्षेत्र में विवाहित स्त्रियों को पहनने ओढने का काफी चाव था महिलायें अपने वस्त्रों की सिलाई व कढ़ाई स्वयं अपने हाथों से करती थी।[11] हिंदू स्त्रियां दामण या सूती घाघरा, आंगी व ओढ़ने का प्रयोग करती थी। कुवंवारी लड़कियां आंगी की जगह कुर्ती पहनती थी। विवाह से पूर्व लड़कियां अपने घर में सूट पहनती थी। सिक्ख स्त्रियां सलवार, कुर्ती व फुलकारी से कढ़े दुपट्टे का प्रयोग करती थी। मुस्लिम स्त्रियां सलवार या घाघरा पहनती थी।[12]

स्त्रियों को आभूषणों का अत्यंत चाव था। गरीब स्त्रियाँ चांदी के व अमीर स्त्रियां सोने के आभूषण धारण करती थी। आभूषणों पर स्त्री का अपना अधिकार होता था व उसे वे अपनी निजी सम्पति समझती थी।[13]

लड़की को दरिद्रता का कारण समझा जाता था। किन्तु हरियाणा में बाल हत्या की घटनाएं बहुत कम थी। लड़कियों को घर में इस तरह से सिखाया जाता था कि वो मायके व ससुराल के लिए लज्जा का कारण ना बने, अपने क्रोध पर नियंत्रण रखे तथा बुरे व्यवहार को चुपचाप सह ले।[14]

लड़की को प्रारम्भ से ही द्वितीय स्थान पर रखा जाता था व लड़के के प्रथम, चाहे वो उम्र में लड़के से बड़ी ही क्यों न हो। उसे दबाकर रखा जाता था कहावत भी प्रचलित थी।[15]

बेटी नै लो जामते अर बहू नै आमतें

अर्थात् बेटी को जन्म से ही व बहू को घर में आते ही उन्हें दबाकर रखना चाहिए। प्रारम्भ से ही उसे नमनशीलता, समायोजन, आज्ञाकारिता, विनम्रता व अधीनता आदि गुणों का अनुसरण करने को कहा जाता था। इसके फलस्वरूप उसमें दृढ़ विचारों व प्रतिबद्धता के भाव का विकास नहीं हो पाता था।[16]

हिंदू धर्म में स्त्रियों में पर्दा प्रथा पर अधिक बल दिया गया था। मुस्लिम स्त्रियां बुर्के में रहती थी। राजपूतों की स्त्रियां घर से बाहर नहीं जाती थी[17] और न ही कृषि कार्यों में पुरुषों का सहयोग करती। किन्तु अन्य खेतीहर व उनकी सहायतक जातियों पुरुषों के साथ कंधे से कंधा मिलकर कार्य करती थी और कार्य भी घूंघट में रहकर करती थी।

बहू पति विवाह व वधू मोल–

समाज में बहु विवाह प्रथा प्रचलित थी। इस प्रथा में एक ही स्त्री को कई भाई बांट लेते थे तथा प्रत्येक उसके पति के रूप में रहते थे जिसमें पत्नी वह केवल उसकी कहलाती थी जिससे उसका विवाह होता था।[18]

विवाह एक आवश्यक सामाजिक बंधन था। वंश का नाम चलाने के लिए संतान हेतू जब विवाह नहीं हो पाता था तो उच्च जाति के पुरुष निम्न जाति या किसी भी जाति की कन्या को खरीद लाते थे। मैल्कम डार्लिंग ने अपनी पुस्तक 'पंजाब पीजेंटस' में लिखा है 1850 ई. के आसपास एक वधू 50 रुपये में मिल जाती थी। रोहतक में 1918 ई. में 10

प्रतिशत लोग महामारी की चपेट में आ गए तो वधूओं के दाम 500 से 2000 तक बढ़ गए व सन् 1919–21 में सूखे के कारण 2000 से 200 तक कम हो गए।[19] यदि लड़का अधिक उम्र का या अपाहिज होता था तो दाम अधिक बढ़ जाते थे। इस प्रकार स्त्री के क्रय–विक्रय में स्त्री–शोषण को बढ़वा दिया।[20] यह प्रथा निम्न जातियों में होने के कारण शोषण की ओर अधिक बढ़ावा मिला। उच्च जातियों में लड़कियों को बेचना बहुत बुरा समझा जाता था। निम्न जाति की स्त्री से उच्च जाति के पुरुष विवाह के पश्चात् उनकी संतान को उच्च जाति का ही माना जाता था। अतः स्त्रियों की जरूरतों की तरफ कोई ध्यान नहीं दिया जाता था।[21] कई बार उन्हें चूहडी या 'चमारी' कह दिया जाता था। स्त्रियों की जाति कोई मायने नहीं रखती थी कहा जाता था– **'बीरां की भी के जात'**।[22]

विधवा पुर्नविवाह–

आर्य समाज की विचारधारा के अनुसार धर्म में सुधार लाने के लिए समाज में व्याप्त बाल विवाह तथा विधवा पुर्नविवाह न करने जैसी कुरीतियों को हटाना आवश्यक था। आर्य समाज ने हरियाणा में प्रचलित बुराईयों और अंधविश्वासों की कटु आलोचना की। विधवा पुर्नविवाह प्रथा में स्त्री में विधवा होने पर उसकी दोबारा शादी उसके पति के भाई या अन्य रिश्ते के भाई से कर दी जाती थी। विधवा को इसके लिए मजबूर नहीं किया जा सकता था परन्तु वास्तव में उसकी इच्छा की और ध्यान नहीं दिया जाता था।[23]

जमीन को परिवार में रखने के लिए 'करेवा' प्रथा का अधिक प्रचलन होने लगा। जब स्त्री के पति की मृत्यु हो जाती थी तो कुछ समय में जमीन पर केवल उसकी पत्नी का ही अधिकार होता था। यदि उसके पहले पति से उसका कोई पुत्र होता तो केवल पुत्र ही सम्पति का हकदार होता था। पुत्री को सम्पति की मलकियत का अधिकार प्राप्त नहीं था।[24]

यदि वह विवाह नहीं करती तो वह केवल इस आधार पर कि उसे ससुराल से गुजारे लायक पैसा नहीं मिलता, संपति को बंटवा सकती थी[25] और यह सिद्ध करना उसी का कार्य था। विधवा सम्पति का बंटवारा तो करवा सकती थी किंतु वह अपने किसी आवश्यक कार्य के लिए उसे बेच नहीं सकती थी। इस प्रकार विधवा पुर्नविवाह भी स्त्रियों के स्तर को ऊंचा

उठाने में असफल रहा क्योंकि विधवा विवाह स्त्री की सुविधा के लिए नहीं बल्कि भूमि को उसके अधिकार से छुड़ाने के लिए किया जाता था।

अतः यह प्रथा स्त्री शोषण का रूप लेती जा रही थी। भूमि का बंटवारा ब्रिटिश सरकार की आर्थिक नीतियों के प्रतिकूल था। अतः इसे रोकने के लिए सरकार ने विधवा पुर्नविवाह पर बल दिया।[26] इस प्रकार विधवा पुर्नविवाह भी स्त्रियों के स्तर को ऊंचा उठाने में असफल रहा क्योंकि विधवा विवाह स्त्री की सुविधा के लिए नहीं बल्कि भूमि को उसके अधिकार से छुड़ाने के लिए किया जाता था।[27] इस प्रथा द्वारा उसका शोषण होता था। फिर भी विधवा पूर्नविवाह के फलस्वरूप इस प्रदेश में सती जैसी घृणित प्रथा का प्रचलन अत्यंत अल्प था।

बाल विवाह–

हरियाणा में बाल–विवाह काफी प्रचलित था जिसमें लड़कियों का अत्यधिक अल्पायु में विवाह कर दिया जाता था। अल्पायु में शादी होने से उनका मानसिक व शारीरिक विकास पूर्ण रूप सेू नहीं हो पाता। इसी कारण से बाल–वधू की मृत्यु दर बढ़ती जा रही थी जो कि हरियाणा क्षेत्र में स्त्री–पुरुष अनुपात में सही संतुलन न होने का प्रमुख कारण थी।[28] इसके साथ ही बाल विधवाओं की समस्या भी होती थी। बहु विवाह की स्त्रियों के निम्न स्तर का मुख्य कारण था।

अन्य सामाजिक वर्जनाएं–

हरियाणा सामाजिक क्षेत्र में अनेक ऐसी वर्जनाएं थी जिससे स्त्रियों की स्थिति निम्नस्तर का रूप धारण कर रही थी। इन सब प्रथाओं में घुघंट प्रथा, वधू मोल प्रथा, विधवा–विवाह प्रथा, बहु विवाह प्रथा, बालविवाह प्रथा, बहुपति विवाह प्रथा के अतिरिक्त स्त्रियों पर और भी बहुत सी अन्य सामाजिक वर्जनाएं थी जो कि उनके स्तर के पतन में सहायक थी व जिसके फलस्वरूप उनका मानसिक, सामाजिक व आर्थिक विकास नही हो पाता था। स्त्रियों को पिता, पुत्र, पति अर्थात् किसी भी पुरुष के अधीन रहना पड़ता था। साथ ही पुरुषों की बैठक के स्थल ''चौपाल'' की तरफ देखना भी पाप समझा जाता था अर्थात् जब भी वो चौपाल के

पास से गुजरती थी तो सदैव घूंघट करके ही निकलती थी यहां स्त्रियां खुलकर नहीं हंस सकती थी और एक कहावत भी प्रचलित थी–

मोटा ब्याज साहूकार न खोवे,
औरत न खोवे हांसी तथा
डूम भला सो बोलणा,
बहू भली सो चुप .....।।[29]

इस प्रचलित कहावत से यह सिद्ध होता है कि स्त्रियों को जोर से अर्थात् बल द्वारा दबाकर रखने से ही वो सही व्यवहार करती है। अतः इन सब कारणों से हरियाणवी महिलाओं की स्थिति काफी शोचनीय थी।

निष्कर्ष:

आजादी से पूर्व तथा 1947 ई. में आजादी के बाद में महिलाओं को कानुनी रूप से अधिकार मिल गए थे फिर भी वे सामाजिक रूप से वे प्रताड़ित की बाट जोह रही थी।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. के.सी. यादव, हरियाणा का इतिहास, भाग–3, दिल्ली, 1981, पृ. 37
2. प्रेम चौधरी, पूर्व उद्धृत, पृ. 2060
3. भारत का इतिहास 1858–1964, डॉ. महेश भटनागर, पृ. 200 (2005–2006)
4. पंजाब जनगणना रिपोर्ट, 1901, पृ. 74
5. रिपोर्ट ऑन प्रोग्राम ऑफ एजुकेशन इन पंजाब, 1901–01, पृ. 25
6. रोहतक जिला गजेटियर, 1970, पृ. 256
7. अम्बाला जिला गजेटियर, 1981, पृ. 283
8. के.सी. यादव, हरियाणा का इतिहास, भाग–3, 1980–82, दिल्ली, पृ. 215
9. भीम सिंह मलिक, हरियाणा लोकसाहित्य सांस्कृतिक, संदर्भ, चण्डीगढ़ 1990,पृ. 156
10. वही, पृ. 156

11. करनाल जिला, गजेटियर, 1910, पृ. 74
12. अम्बाला जिला सटैलमेंट रिपोर्ट, 1859, पृ. 77
13. करनाल जिला गजेटियर 1910, पृ. 74
14. कस्टमरी लॉ ऑफ करनाल डिस्ट्रिक्ट, पृ. 103
15. के.सी. यादव एस.आर. फोगाट, हरियाणाः ऐतिहासिक सिंहावलोकरन, चण्डीगढ़, पृ. 109
16. के.सी. यादव एस.आर. फोगाट, हरियाणाः ऐतिहासिक सिंहावलोकरन, चण्डीगढ़, पृ. 109
17. मेल्कम डार्लिंग, पंजाब पीजेंटस, दिल्ली, 1978, पृ. 33 से 35 तथा जिले की सैटलमेंट रिपोर्ट, 1843
18. हिसार जिला गजेटियर, 1904, लाहौर, 1908, पृ. 65
19. मेल्कम डार्लिंग, पूर्व उद्धृत, पृ. 50
20. रोहतक जिला गजेटियर, पृ. 1910, पृ. 91
21. हिसार जिला गजेटियर 1904, लाहौर 1908, पृ. 65
22. प्रेम चौधरी, पूर्व उद्धृत, पृ. 2062
23. जोसेफ, पूर्व उद्धृत, पृ. 45
24. हिसार जिला गजेटियर 1907–11, ए लाहौर 1907, पृ. 229
25. जोसेफ पूर्व उद्धृत, पृ. 136–137
26. जे.एम. डुई लैड़ एडमिनिस्ट्रेशन मैनुअल, चंडीगढ़, 1971, पृ. 270–71
27. सेंसज ऑफ इंडिया, पंजाब एंड दिल्ली, 1921, भाग–1, पृ. 244
28. सेंसज ऑफ इंडिया, 1931, भाग–1, पृ. 157
29. के.सी. यादव व एस.आर. फोगाट, हरियाणा इतिहासिक सिंहावलोकन, चण्डीगढ़, पृ. 128